International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 2; March 2016; Page No. 29-30

कुंडलिनी शक्ति योग की वर्तमान की जरूरत

डॉ. माधवी शर्मा

डी. बी. (पी. जी.) महाविद्यालय, खेरली, अलवर, राजस्थान, भारत।

प्रस्तावना

मूलाधारे मूलविद्या विद्युतकोटि समप्रभासम्।
सूर्यकोटि प्रतीकाषां चन्द्रकोटि द्रवां प्रिये।।

मूलाधार चक्र में विद्युत प्रकाष ही करोड़ों किरणों वाला, करोड़ों सूर्यों और चन्द्रमाओं के प्रकाष के समान, कमल की दण्डी के समान अविच्छिन्न तीन घेरे डाले हुए मूल विद्या रूपिणी कुंडलिनी रूप में स्थित है।

कुंडलिनी एक दिव्य शक्ति है जो सर्प की भांति तीन फेरे लेकर सबसे नीचे के चक्र मूलाधार में स्थित है। जड़, चेतन सभी में यह कुंडलिनी शक्ति सुप्तावस्था में सृष्टि के प्रारम्भिक काल से ही विद्यमान रहती है। कुण्डलिनी शक्ति मानव की ऊर्जा शक्ति है। इस जगत में जैसे ही चेतन तत्व जन्म लेता है उसमें यह कुंडलिनी शक्ति रहती है लेकिन मानव में यह शक्ति तीव्र होती है। जब तक यह शक्ति सुप्तावस्था में होती है तब तक मानव विषय वासना की ओर आकर्षित होता है जैसे ही यह कुंडलिनी शक्ति योग साधना से जाग्रत अवस्था में आ जाती है, मानव को ऐसी अनुभूति होती है मानो यह कोई सर्पिलाकार तरंग है जो उसमें अलौकिक ज्ञान का उद्रेक कर रही है। इस कुण्डलिनी शक्ति के द्वारा काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि षड् रिपुओं पर विजय प्राप्त होकर ईष्वर से तादात्म्य हो जाता है। इस प्रकार योग द्वारा इस कुण्डलिनी शक्ति के जाग्रत होने पर शरीरस्थ क्लेषों का शमन, चित्तवृत्तियों का निरोध होकर परम सुख की समाधिस्थ अवस्था, और स्वरूपावस्थित हो कैवल्य की प्राप्ति हो जाती है।

कुण्डलिनी शक्ति को षट्चक्र भेदन की साधना भी कहते हैं। जिस प्रकार पी.एच.डी. एक डिग्री है इसे किसी भी भाषा में प्राप्त किया जा सकता है उसी प्रकार आत्म तत्व, आत्म शक्ति एक है उसे प्राप्त करने के, विवेचन करने के, विष्लेषण करने के और साधना विधान भिन्न–भिन्न हो सकते हैं। शंकराचार्य की आनन्दलहरी में इसी तरह के विचार वर्णित है। योग दर्षन के समाधिपाद में कहा गया है।

विषोकाया ज्योतिष्मत्री

शोक सन्तापों का हरण करने वाली ज्योति शक्ति के रूप में कुण्डलिनी शक्ति की ओर संकेत है। इस समस्त शरीर को, सम्पूर्ण जीव कोषों को, महाषक्ति को संभालने वाली प्रक्रिया प्राण हैं। इस प्रक्रिया के दो ध्रुव, दो खण्ड हैं एक को चय प्रक्रिया (एनाबॉलिक एक्षन) तथा दूसरे को अपचय प्रक्रिया (कैटाबोलिक एक्षन) कहते हैं। इसी को दार्षनिक भाषा में षिव और शक्ति भी कहा जाता है। षिव क्षेत्र सहस्त्रधार तथा शक्ति क्षेत्र मूलाधार कहा गया है। इन्हें परस्पर जोडने वाली, परिभ्रमण शील शक्ति कुण्डलिनी हैं।

सहस्त्रधार और मूलाधार का क्षेत्र विभाजन करते हुए मनीषियों ने मूलाधार से लेकर कण्ठ पर्यन्त का क्षेत्र एवं चक्र संस्थान 'षक्ति' भोग बताया है तथा कण्ठ के ऊपर का स्थान 'षिव' देष कहा है।

मूलाद्धाराद्धि षट्चक्रं शक्ति स्थान मुदीरितम्।
कण्ठदुपरि मूर्द्धान्तं शाम्भवं स्थानमुच्यते।।[1]

मूलाधार से सहस्त्रसार तक की, काम बीज से ब्रह्म बीज तक की यात्रा महायात्रा है। योगी इसी मार्ग को पूरा करते हुए परम लक्ष्य तक पहुंचते है। जीव सत्ता प्राण शक्ति का निवास जननेन्द्रिय मूल में है। प्राण जननेन्द्रिय के रजवीर्य से उत्पन्न होते है। ब्रह्मा, विष्णु और षिव का निवास स्थान जिस मस्तिष्क के मध्य केन्द्र में है। इस नाभिक (न्यूकलियस) को सहस्त्रसार कहते हैं। आत्म साक्षात्कार की प्रक्रिया यहीं से होती हैं। आत्मोत्कर्ष की महायात्रा जिस राजमार्ग से होती है उसे मेरूदण्ड या सुषुम्ना कहते हैं। इस सुषुम्ना का एक सिरा मस्तिष्क का तथा दूसरा काम केन्द्र का स्पर्ष करता है। इड़ा पिंगला प्रवाह इसी क्षेत्र को दोहराने के लिए नियोजित किए जाते हैं। जैसे साबुन और पानी से कपड़े धोए जाते हैं। वैसे ही इड़ा पिंगला के माध्यम से किए जाने वाले नाड़ी शोधन प्राणायाम मेरूदण्ड का संषोधन करने के लिए हैं। इन दोनों ऋणात्मक और धनात्मक शक्तियों का उपयोग सृजनात्मक उद्देष्य से भी होता हैं। इड़ा और पिंगला संषोधन और सृजन का दोहरा काम करते हैं। जो आवष्यक है उसे विकसित करने में वे कुषल माली की भूमिका निभाते हैं। माली के द्वारा किए जाने वाला जमीन खोदने जैसा ध्वंसात्मक कार्य किया जाता है। यह उत्खनन का कार्य उन्नयन के लिए होता है। माली भूमि खोदने, खरपतवार उखाडने, पौधे को काँट–छाँट करते समय ध्वसांत्मक कार्य में संलग्न होता है किन्तु खाद पानी देने, पौधों के संरक्षण करने का काम उसकी उदार सृजनषीलता का द्योतक है। उसी प्रकार इड़ा पिंगला की दोहरी भूमिका होती है। इड़ा पिंगला के माध्यम से सुषुम्ना क्षेत्र से काम करने वाली प्राण विद्युत का विषिष्ट संचार प्रस्तुत करके कुण्डलिनी जागरण की साधना सम्पन्न की जाती है।

कुण्डलिनी शक्ति के सात चक्र होते हैं –

1. मूलाधार
2. स्वाधिष्ठान
3. मणिपुर
4. अनाहत
5. विषुद्धि
6. आज्ञा
7. सहस्त्रसार

कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत करने से पहले योग के द्वारा चित्त को शुद्ध करके हठयोग की क्रियाओं से नाड़ी शोधन आवष्यक है।

पतंजलि ने लिखा है –

''योगाष्चित्तवृत्ति निरोधः।''[2]

अर्थात् चित्तवृत्तियों का निरोध ही योग है।

गीता में कहा है – ''योगः कर्मसु कौषलम्।'' कर्मों में कुषलता ही योग है तथा

'' सिद्धयसिद्ध्यो समोभूत्वा समत्वंयोग उच्यते।''

अर्थात् सुख–दुख, लाभ–अलाभ, शत्रु–मित्र, शीत और ऊष्ण आदि द्वन्दों में समभाव रखना ही योग है।
डॉ. बी. जी. रेले के अनुसार ''योग वह विद्या है जिसके द्वारा मनुष्य का अन्तःकरण इस योग्य बन जाता है कि वह उच्च स्फुरणों की तरफ अग्रसर होता हुआ असीम चेतन व्यापार को प्राप्त करता है।''[1]
डॉ. एस. एन. दास गुप्त के अनुसार ''योग का अर्थ किसी वस्तु विषेष के साथ चित्त का शांतिमय संयोग है।''[2]
इस प्रकार योग में व्यक्ति चिन्तन की दृष्टि से बहिर्मुख के स्थान पर अन्तर्मुखी हो जाता है। योग अपने आप में एक मनोविज्ञान है। अनेक व्यक्ति योग करने का प्रयास करते हैं, समाधि लगाने की चेष्टा करते हैं। परन्तु उनका मन शान्त नहीं होता क्योंकि मन चंचल है। योग व समाधि सिद्धि के लिए महर्षि पतंजलि ने अष्टांगिक योगमार्ग का निर्देष किया है –

'यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहार धारणा ध्यान समाधयो ऽष्टावगांनि।'[3]

इनमें से प्रत्येक अंग परस्पर एक दूसरे की अपेक्षा रखते हैं। इस अष्टांगिक मार्ग का अनुष्ठान करने से अषुद्धि का नाष होने पर ज्ञान का प्रकाष बढता है।
योग की परिधि में योग मानव मन में सुप्त अंतर्दृष्टि को प्रबोधित और आंदोलित करता है जिसमें अन्तः ज्ञान का अभाव रहता है वह मानव विकास से विश्रांति का प्रकाषमय मार्ग छोडकर कंटक से आकीर्ण मार्ग पर चल पड़ता है। इस मार्ग पर चलकर वह न तो इहलौकिक को प्राप्त कर सकता है और न पारलौकिक को। योग दुरग्रह, मिथ्याचार, शोक, द्वेष, राग से दूषित प्रज्ञा को परम ज्ञान से आलोकित कर देता है जिससे उसे कर्त्तव्य अकर्त्तव्य का विवेक हो जाता है। योग से बुद्धि अचल व गहन हो जाती है, चित्त का प्रक्षालन हो जाता है। चित्त स्थिर हो जाता है उसकी कलुषता प्रक्षालित हो जाती है। चित्त से काम, क्रोध, राग, द्वेष, अहंकार, लोभ, मोह का आवरण हट जाता है और वह अलौकिक ज्ञान की ओर अग्रसर होता है। योगजन्य चेतना और एकाग्रता से परिष्कृत बुद्धि से युक्त मनुष्य का आचरण ऋषि जन तुल्य हो जाता है।
इस प्रकार ''योग स्वयं की स्वयं के माध्यम से स्वयं तक पहुंचने की यात्रा है।''
आज के प्रदूषित वातावरण में योग एक ऐसी औषधि है जिसका कोई साइड इफैक्ट नहीं है। योग आज हमारे लिए आवष्यक है, हमारे शारीरिक, मानसिक और आत्मिक स्वास्थ्य के लिए जरूरी है। योग के माध्यम से आत्मिक संतुष्टि, शांति और ऊर्जावान चेतना की अनुभूति होती है जिससे हमारा जीवन सकारात्मक ऊर्जा संतोषमय और आनन्द के साथ आगे बढता है।
योग की परिधि में पहुंचा व्यक्ति न तो इन्द्रियों के प्रति ही असहिष्णु रहता है और न ही समाज के प्रति। उसका चित्र, मस्तिष्क कर्त्तव्य बोध से दैदीप्यमान हो जाता है और यह कर्त्तव्य बोध सुप्त व निराष हो रही समस्त शक्तियों को रचनात्मकता व आत्मज्ञान की ओर प्रवाहित करता है। योग का अनुष्ठान मानव के समस्त उद्वेगों को निरस्त कर मन को सबल बनाता है। योगाभ्यास से मानव की संकल्प शक्ति सुदृढ होकर जीवन मे आनन्द का उद्रेक करती है।
वर्तमान में असंतोष, ऐष्वर्य की कामना, लालसा जनित भयावह रक्त रंजित संहार को, संघर्ष को विराम देने वाला एक मात्र साधन योग है। योग में मानव के सामान्य व्यवहार से लेकर ध्यान एवं समाधि सहित आध्यात्म की उच्चतम अवस्थाओं का अनुपम समावेष है। योग संसार के समस्त व्यावहारिक और परमार्थिक उद्देष्यों की प्राप्ति में सहज–सुलभ एवं प्रभावी उपाय है।

संदर्भ ग्रथ

1. वराहश्रुति।
2. पतंजलि योग सूत्र।
3. मिस्टीरियस कुंडलिनी – डॉ. बी. जी. रेले पृ. 10–11।
4. हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलोसफी – डॉ. एस. एन. दास, II पृ. 33।
5. योगसूत्र पंतजलि 2/29।